अध्याय-11

विश्वरूपदर्शनयोग-नामक 11वाँ अ0।।

[1-4 विश्वरूप के दर्शन-हेतु अर्जुन की प्रार्थना।]

अर्जुन उवाचः-मदनुग्रहाय परमं गुह्यं अध्यात्मसञ्ज्ञितं। यत् त्वया उक्तं वचः तेन मोहः अयं विगतो मम।। 11/1

त्वया मदनुग्रहाय यदध्यात्मसंज्ञितं परमं	आप {दयानिधान} ने मेरे ऊपर दया करके जो अध्यात्म नाम का परमश्रेष्ठ
गुह्यं वचः उक्तं तेन मम अयं मोहः विगतः	रहस्य कहा है, उससे मेरा यह {देह के सम्बन्धियों का} मोह दूर हो गया है।

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया। त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यं अपि च अव्ययं।। 11/2

हि कमलपत्राक्ष मया भूतानां	क्योंकि हे कमललोचन {शिवबाबा}! मैंने {इस पुरुषोत्तम संगमयुग में} प्राणियों की
भवाप्ययौ त्वत्तः विस्तरशः श्रुतौ	उत्पत्ति और विनाश को {चतुर्मुखी ब्रह्मा की वेदवाणी द्वारा} आपसे विस्तारपूर्वक सुना
च अव्ययं माहात्म्यं अपि	और {फिर मुकर्रर रथ में प्रश्नोत्तर पूर्वक आपका} अविनाशी महात्म्य भी {सुना}।

एवं एतत् यथा आत्थ त्वं आत्मानं परमेश्वर। द्रष्टुं इच्छामि ते रूपं ऐश्वरं पुरुषोत्तम।। 11/3

परमेश्वर त्वमात्मानं यथात्थ	हे परमेश्वर! आपने अपने {नं.वार योग-ऊर्जा युक्त विभूति वाला} जैसा {विस्तार} बताया है,
एतत् एवं पुरुषोत्तम	{यदि} यह ऐसा है {तो} हे {चतुर्युगी के बेहद रंगमंच के M.D./} आत्माओं में उत्तम {शिवबाबा!}
ते ऐश्वरं रूपं द्रष्टुं इच्छामि	आपके ऐश्वर्यवान् {विराट} रूप {महादेव} को {बुद्धि के ज्ञाननेत्र द्वारा} देखना चाहता हूँ।

मन्यसे यदि तत् शक्यं मया द्रष्टुं इति प्रभो। योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शय आत्मानं अव्ययं।। 11/4

प्रभो यदि इति मन्यसे मया तत् द्रष्टुं शक्यं ततः	हे प्रभु! यदि ऐसा मानते हो {कि} मैं उस {चमत्कार} को देख सकता हूँ, तो
योगेश्वर त्वं आत्मानं अव्ययं मे दर्शय	हे योगेश्वर! आप अपना अविनाशी {विभूति} रूप मुझे दिखाइए।

[5-8 भगवान द्वारा अपने विश्वरूप का वर्णन]

श्रीभगवानुवाच:-पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशः अथ सहस्रशः। नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च।। 11/5

पार्थ नानाविधानि च नानावर्णाकृतीनि	हे पृथ्वीराज! अनेक प्रकार की {योनियों वाले} और अनेक वर्ण और आकार वाले
शतशः अथ सहस्रशः मे दिव्यानि रूपाणि पश्य	सैकड़ों और हज़ारों मेरे {पुत्ररूप रुद्राक्ष गणों के} दिव्य रूपों को देख।

पश्य आदित्यान् वसून् रुद्रान् अश्विनौ मरुतः तथा। बहूनि अदृष्टपूर्वाणि पश्य आश्चर्याणि भारत।। 11/6

भारत आदित्यान् वसून् रुद्रान्	हे भरतवंशी! {जिन चेतन रुद्राक्ष मणकों में} 12 सूर्यरूप चक्रवर्तियों, 8 वसुदेवों, 11 रुद्रों,
अश्विनौ मरुतः पश्य तथा	2 {जुड़वा} अश्विनी कुमारों, {49 सूक्ष्म देहधारी} मरुतों को देख। उसी प्रकार {चतुर्युगी में}
अदृष्टपूर्वाणि बहूनि आश्चर्याणि पश्य	पहले {पूर्वजन्मों में भी कभी} न देखे हुए बहुत-से {सांसारिक} आश्चर्यों को देख।

इह एकस्थं जगत् कृत्स्नं पश्य अद्य सचराचरं। मम देहे गुडाकेश यत् च अन्यत् द्रष्टुं इच्छसि।। 11/7

गुडाकेश अद्य मम इह देहे	हे निद्राजीत अर्जुन! आज मेरे इस {मानवीय बीजरूप बाप महादेव/आदम की} देह में
सचराचरं कृत्स्नं जगत् एकस्थं	जड़ और चेतन सहित सम्पूर्ण जगत् को {प्रतीकात्मक वटवृक्ष में} एक ही जगह में स्थित
पश्य च यत् अन्यत् द्रष्टुं इच्छसि	देख लो और जो अन्य कुछ भी देखना चाहते हो, {तीसरे ज्ञाननेत्र से देख लो}

न तु मां शक्यसे द्रष्टुं अनेन एव स्वचक्षुषा। दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगं ऐश्वरं।। 11/8

तु अनेनैव स्वचक्षुषा मां न द्रष्टुं	किंतु इन्हीं अपनी {इन} आँखों से मुझ {इस देह में स्थित विराट रूप} को नहीं देख
शक्यसे ते दिव्यं चक्षुः ददामि	सकेगा। तुझको दिव्य {बुद्धि की एडवांस सच्ची गीता वाला तीसरा ज्ञान-} नेत्र देता हूँ,
मे ऐश्वरं योगं पश्य	{जिससे} मेरे {चौरासी जन्मों के भी} ऐश्वर्यवान यौगिक {ऊर्जा-संपन्न हीरो पार्टधारी} रूप को देख {सकेगा}।

[9-14 संजय द्वारा धृतराष्ट्र के प्रति विश्वरूप का वर्णन]

संजय उवाचः-एवं उक्त्वा ततो राजन् महायोगेश्वरो हरिः। दर्शयामास पार्थाय परमं रूपं ऐश्वरं।। 11/9

ततः राजन् एवमुक्त्वा महायोगेश्वरः हरिः	तब राजन! ऐसा कहकर महान योगेश्वर पापहर्ता शिव {ज्योति भगवान}
पार्थाय परमं ऐश्वरं रूपं दर्शयामास	अर्जुन को परम ऐश्वर्यवान् {नं वार हीरो जैसे} विभूतिरूप दिखाने लगे।

अनेकवक्त्रनयनं अनेकाद्भुतदर्शनं। अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधं।। 11/10

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगंधानुलेपनं। सर्वाश्चर्यमयं देवं अनन्तं विश्वतोमुखं।। 11/11

अनेकवक्त्रनयनं अनेकाद्भुतदर्शनं	{भाँति-2 के} अनेक मुख और नेत्र वाले, अनेक अद्भुत दर्शन वाले,
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधं	अनेक {दिव्यगुणों के} आभूषणों वाले, उठाए हुए अनेक दैवीय ज्ञानायुधों वाले,
दिव्यमाल्याम्बरधरं	दिव्य {रूप रुद्राक्ष & विजय} मालाओं व {कंचनकायारूपी} वस्त्र धारणकर्ता, {अलौकिक}
दिव्यगंधानुलेपनं सर्वाश्चर्यमयं	दैवीय {गुणों की} सुगंध से लिम्पायमान, सब {प्रकार के बुलंद} आश्चर्यों से भरे हुए,
विश्वतोमुखं अनन्तं देवं	{पु. संगम में} विश्वधर्मों के {ऑलराउंडर} पंचानन परमब्रह्म के असीम विराट देव को {देखा}।

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेत् युगपत् उत्थिता। यदि भाः सदृशी सा स्यात् भासः तस्य महात्मनः।। 11/12

यदि दिवि सूर्यसहस्रस्य भाः युगपत् उत्थिता	यदि आकाश में हज़ारों सूर्यों की कान्ति {1 देह में} एक साथ उदित
भवेत् सा भासः तस्य महात्मनः सदृशी स्यात्	हो {तो} वह कांति उस {विवस्वत} महान आत्मा के समान हो सकती है।

तत्र एकस्थं जगत् कृत्स्नं प्रविभक्तं अनेकधा। अपश्यत् देवदेवस्य शरीरे पाण्डवः तदा।। 11/13

तदा पाण्डवः देवदेवस्य तत्र	तब {पाण्डु नामक} पण्डापुत्र पाण्डव ने {संसार-बीज} देवाधिदेव के उस {विराट}

शरीरे अनेकधा प्रविभक्तं कृत्स्नं	शरीर में अनेक रूपों के {दाईं-बाईं ओर के विधर्मियों+स्वदेशियों में} बँटे हुए सम्पूर्ण
जगत् एकस्थं अपश्यत्	{7 अरब के} जगत {रूपी अश्वत्थ सृष्टिवृक्ष} को एक {सृष्टि-बीज आदिदेव} में {समूचा} स्थित देखा।

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः। प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिः अभाषत।। 11/14

ततः स विस्मयाविष्टः हृष्टरोमा धनंजयः	तब वह आश्चर्य में भरा रोमांचित हुआ {परमपिता शिव-पुत्र} अर्जुन
देवं शिरसा प्रणम्य कृतांजलिः अभाषत	{विश्व} देव को मस्तक द्वारा प्रणाम करके हाथ जोड़ते हुए कहने लगा।

[15-31 अर्जुन द्वारा भगवान के विश्वरूप का देखा जाना और उनकी स्तुति करना]

अर्जुन उवाचः- पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान्। ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ।। 11/15

देव तव देहे सर्वान् देवान् च	हे देवाधिदेव! {मेरे द्वारा समर्पित अब} आपके {बने} शरीर में सब देवताओं को तथा
भूतविशेषसंघान्	{नं. वार योगऊर्जायुक्त} प्राणियों की विशेष प्रकार की {भिन्न योनि-} समुदायों को {इस वटवृक्ष रूप सृष्टिवृक्षीय}
कमलासनस्थं ब्रह्माणं च	{महादेव के व्यक्तित्व में पु.संगमी अनासक्ति के} कमलासन पर बैठे {सम्पन्न बने} चतुरानन को और
ईशं सर्वान् ऋषीन् तथा	{उसी देह से} श्रेष्ठतम शासक को, {संगठित पंचानन ब्रह्मा की ज्ञानेन्द्रियों में} सब ऋषियों को तथा
दिव्यान् उरगान् पश्यामि	{तीव्रगति से स्थानांतरित/सरकने वाले} दिव्य सर्प {रूप संन्यासियों} को देखता हूँ।

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतः अनन्तरूपं। न अन्तं न मध्यं न पुनः तव आदिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप।। 11/16

अनेकबाहु	{मनुष्य-सृष्टि के बीजरूप} अनेक {राजयोग-सहयोगी} भुजाओं वाले, {द्वापुर से भ्रष्टेन्द्रियों के कर्महिमायती}
उदरवक्त्रनेत्रं सर्वतः अनन्तरूपं	{कुरुवंशी वैश्यरूप} पेट, देवरूप मुख {और रुद्र+अक्ष रूप} नेत्र वाले, {ऐसे} सब ओर अनंतरूप
त्वां पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप पुनः	आप {विराट वटवृक्ष} को देखता हूँ। हे विश्वेश्वर! हे विश्वरूप! फिर भी {मैं}

तव न अन्तं न मध्यं न आदिं पश्यामि	आपके {लिंगरूप रथ में} न अंत को, न मध्य को, न आदि को {ही} देख पाता हूँ।

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तं। पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्तात् दीप्तानलार्कद्युतिं अप्रमेयं।। 11/17

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं	{पवित्रता के} ताजधारी, {दृढ़ता के} गदाधारी, {84 जन्मों वाले} चक्र के धारणकर्ता
च तेजोराशिं सर्वतः दीप्तिमंतं	और {अखूट योग की ऊर्जारूप} तेज के पुंज, सब ओर {ज्ञान से प्रकाशित} दीप्तिवाले
समंतात् दुर्निरीक्ष्यं दीप्तानल	चारों ओर {योग की चकाचौंध में} कठिनाई से देखने योग्य, दीप्तिमान अग्नि {की}
अर्कद्युतिं अप्रमेयं त्वां पश्यामि	{ज्वाजल्यमान साक्षात् अग्निदेव जैसे} सूर्य की प्रभा वाले, उपमाहीन आपको देख रहा हूँ।

त्वं अक्षरं परमं वेदितव्यं त्वं अस्य विश्वस्य परं निधानं। त्वं अव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनः त्वं पुरुषो मतो मे।। 11/18

त्वं अक्षरं परमं वेदितव्यं त्वं अस्य	आप क्षरणरहित {अमोघवीर्य} परमपुरुष {शिवबाबा ही} जानने योग्य हैं। आप इस
विश्वस्य परं निधानं त्वं अव्ययः	विश्व के परम आश्रय हैं। आप {अर्जुन-रथ में} अविनाशी {पार्टधारी} आत्मा हैं।
शाश्वतधर्मगोप्ता मे मतः	शाश्वत {सत्य सनातन} धर्म के रक्षक हैं; {अतः} मेरी मान्यता है {कि सत्य सनातन धर्म के}
त्वं सनातनः पुरुषः	आप सनातन/ {प्राचीनतम धर्मपिता, ब्रह्मा के पुत्र •सनत्कुमार/विवस्वत द्वारा} परमपुरुष हैं।

•{1 धर्मपिता के नाम पर धर्म का नाम होता है; जैसे- बुद्ध से बौद्ध धर्म, क्राइस्ट से क्रिश्चियन, मुहम्मद से मुस्लिम धर्म। ऐसे ही सनत्कुमार से 'सनातन धर्म'। बाकी सिन्धु से बिगड़ते हुए 'हिन्दू' तो पश्चिमी विदेशियों का दिया हुआ नाम है। }

अनादिमध्यान्तं अनन्तवीर्यं अनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रं। पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रम् स्वतेजसा विश्वं इदं तपन्तं।। 11/19

अनादिमध्यान्तं अनन्तवीर्यं	आदि, मध्य और अंतरहित {ऑलराउंडर} अमोघवीर्य वाले {आप ही तो विराट रूप में}
अनंतबाहुं शशिसूर्यनेत्रं	असंख्य सहयोगी भुजाओं वाले, {दायीं-बायीं ओर से} ज्ञानचंद्रमा+ज्ञानसूर्य {शिव} नेत्र वाले,

दीप्तहुताशवक्त्रम् त्वां स्व-	धधकती हुई {रुद्रज्ञान} अग्निरूप मुख वाले {हे महारुद्र}! आपको अपने {बड़े पुत्र की योग-ऊर्जा के}
तेजसा इदं विश्वं तपन्तं पश्यामि	तेज से इस {महापापी, कलियुगी व नरकीय} संसार को तपाता हुआ देख रहा हूँ।

द्यावापृथिव्योः इदं अन्तरं हि व्याप्तं त्वया एकेन दिशश्च सर्वाः। दृष्ट्वा अद्भुतं रूपं उग्रं तव इदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन्।। 11/20

द्यावापृथिव्योः इदमन्तरं च सर्वाः	{स्वर्गीय दिन रूप} द्युलोक और {सप्त महाद्वीपा} पृथ्वी का यह अन्तराल और सारी
दिशः एकेन त्वया हि व्याप्तं तव	{ही दसों} दिशाएँ अकेले आप {विशाल बुद्धि} के द्वारा ही विस्तीर्ण हुई हैं। आप {महाकाल} का
इदमद्भुतमुग्रं रूपं दृष्ट्वा	यह अद्भुत भयंकर {कल्पान्तकारी महाविनाशक बम्बों-भूकम्पों की आग बरसाता} रूप देखकर,
महात्मन् लोकत्रयं प्रव्यथितं	हे महात्मन्! {सुख-दुःख-शांतिधाम} तीनों लोकों {के प्राणी अंतःकरण में भय से} अत्यंत काँप रहे हैं।

अमी हि त्वां सुरसंघा विशन्ति केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति। स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः।। 11/21

हि अमी सुरसंघाः त्वां विशन्ति	वास्तव में, ये {9 कुरी के ब्राह्मण सो} देव समूह आप {विराटरूप} में समा जाते हैं। {अतः}
केचित् भीताः प्रांजलयः गृणन्ति	कुछ {भक्त} भयभीत हुए हाथ जोड़कर गुण गाते हैं। {विश्व-कल्याण भाव के}
महर्षिसिद्धसंघाः स्वस्ति इति उक्त्वा	महर्षिगण व सिद्धों के समूह 'कल्याण हो'-2 ← ऐसे बोल कर {शास्त्रसंमत}
त्वां पुष्कलाभिः स्तुतिभिः स्तुवन्ति	आप की अनेक प्रकार से {वेदमंत्रों, कीर्तन आदि द्वारा} स्तुतियाँ करते हैं।

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या विश्वे अश्विनौ मरुतश्च ऊष्मपाश्च। गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा वीक्षन्ते त्वां विस्मिताः चैव सर्वे।। 11/22

ये रुद्रादित्या वसवः	जो 11 रुद्र, 12 सूर्य {जैसे चक्रवर्ती}, अष्टवसु {रूप आप की कुबेर-इन्द्रादि अष्टमूर्तियाँ}
च साध्या विश्वे अश्विनौ	और प्रत्येक देव विश्वदेव, दो {राम+कृष्ण} अश्विनी कुमार, {पुत्ररूप सूक्ष्मशरीरी ब्रह्मा+}
मरुतः च ऊष्मपाः च	49 मरुद्गण और योगूर्जा का तेजपाई {अन्यान्य सनातन कालीन बीजरूप रुद्रगण} हैं और
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसंघाः	गन्धर्व, यक्षगण {तथा कलियुगी} राक्षसों वा रिद्धि-सिद्धि {ज्ञाता तांत्रिक} समुदाय,

सर्वे त्वां एव विस्मिताः वीक्षन्ते	सब आप {प्यार के सागर} के {रौद्ररूप को} ही आश्चर्यान्वित हुए {टकटकी बाँधे} देख रहे हैं।

रूपं महत् ते बहुवक्त्रनेत्रं महाबाहो बहुबाहूरुपादं। बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथिताः तथा अहं।। 11/23

महाबाहो बहुवक्त्रनेत्रं	हे {8 सहयोगियों रूप} विशाल भुजाओं वाले! अनेक {शंख रूप} मुखवाले {& ज्ञान-}नेत्र वाले,
बहुबाहूरुपादं बहूदरं	अनेक {क्षत्रियरूप} भुजाओं, {कलियुग में} विस्तारित {शूद्ररूप} पैरों वाले, अनेकों {वैश्य रूप} पेट
बहुदंष्ट्राकरालं ते महत्	{और} अनेकों {नीचे-ऊपर एटमबंबों की} विकराल दाढ़ों वाले, आपके महान् {भयंकर}
रूपं दृष्ट्वा लोकाः तथाहं प्रव्यथिताः	{रौद्र} रूप को देखकर {संसार के} सब लोग तथा मैं {भी} अत्यंत काँप रहा हूँ।

नभःस्पृशं दीप्तं अनेकवर्णं व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रं। दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो।। 11/24

हि विष्णो नभः स्पृशं अनेकवर्णं दीप्तं	क्योंकि हे प्रवेशनीय• {शिवबाबा! गी.11-54} नभस्पर्शी, अनेक रंगों में प्रदीप्त,
व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रं त्वां	{डरावना} मुख फाड़ते हुए, चमकीली बड़ी-2 {क्रोधान्वित लाल-2} आँखों वाले, आपका
दृष्ट्वा प्रव्यथितान्तरात्मा	{रौद्र रूप} देखकर अत्यंत भयभीत अन्तरात्मा वाला {मैं इस तामसी कलियुगी निर्बलहृदय}
धृतिं च शमं न विन्दामि	{की देह में} धीरज और शांति नहीं पाता हूँ। {•Uट्यूब में एडवांस सच्ची गीता से संबंधित सारा ज्ञान दिया है।}
•{विष्णु की व्युत्पत्ति हैः- विश् धातो प्रवेशनात्} {'आदीश्वरचरित्र' में देखें पृ. 119 से 152; (U TUBE में; Adhyatmik Vidyalaya)}	

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वा एव कालानलसन्निभानि। दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास।। 11/25

देवेश जगन्निवास दंष्ट्राकरालानि	हे देवों के ईश महादेव! हे जगन्नाथ! {नीचे-ऊपर के बंबों रूपी} विकराल दाढ़ों वाले
च कालानलसन्निभानि ते	और {पु. संगमी} प्रलयकालीन आग-जैसी उगलती आपकी {क्रांतिकारी वाणी के}
मुखानि दृष्ट्वा एव दिशः न जाने	मुखों को देखकर ही दिशाएँ {भी} भूल गया हूँ; {फिर उस वाणी का चिंतन करने से तो}
च शर्म न लभे प्रसीद	और चैन नहीं पड़ता। प्रसन्न हो जाइए। {वही चतुर्भुजी विष्णु का सौम्यरूप दिखाइए।}

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सह एव अवनिपालसङ्घैः। भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रः तथा असौ सह अस्मदीयैः अपि योधमुख्यैः।। 11/26

त्वां अस्मदीयैः योधमुख्यैः सह अमी	आपमें हमारे मुख्य योद्धाओं सहित, ये {भारतवासी प्रजा के रक्तपायी पूंजीपति}
धृतराष्ट्रस्य पुत्राः च भीष्मः	धृतराष्ट्र के {कौरव-कांग्रेसी} पुत्र और {सर्वव्यापी के भयंकर विषदाता} संन्यासी भीष्म,
द्रोणः तथा असौ सूतपुत्रःसह	{कलियुगी प्राचार्य} द्रोण तथा यह {सर्वोत्तम सूर्य जैसा सेवक अधिरथ}/सारथी का पुत्र कर्ण सहित
सर्वे एव अवनिपालसंघैःअपि	सारे ही {दुनियाँवी देशी-विदेशी प्रजातंत्र के} पृथ्वीपालों {मंत्री+अधिकारियों} का समूह भी

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि। केचित् विलग्नाः दशनान्तरेषु सन्दृश्यन्ते चूर्णितैः उत्तमाङ्गैः।। 11/27

ते दंष्ट्राकरालानि भयानकानि	आपके विकराल {एटामिक-मिसाइलिक} दाढ़ों वाले, भयंकर {डरावनी वाणीवक्ता और}
वक्त्राणि त्वरमाणा विशन्ति	{लम्बी जीभ के} मुखों में तीव्रतापूर्वक {सहमत हुए} घुसे जा रहे हैं। {भारतीयों में से ऐसी}
केचित् दशनान्तरेषु	कुछ {सीधी-सादी सामान्य जनजातियाँ} दाँतों के बीच में {झूठी मान्यताओं/परम्पराओं में}
विलग्नाः चूर्णितैः उत्तमांगैः संदृश्यन्ते	फँसे, चूर-2 हुए {बुद्धि रूपी} सिरों के साथ अच्छे से {प्रत्यक्ष} देखे जा रहे हैं।

यथा नदीनां बहवः अम्बुवेगाः समुद्रं एव अभिमुखाः द्रवन्ति। तथा तव अमी नरलोकवीरा विशन्ति वक्त्राणि अभिविज्वलन्ति।। 11/28

यथा नदीनां बहवः अम्बुवेगाः समुद्रं एव	जैसे {जड़जल वाली गंगादि} नदियों की अनेक जलधाराएँ समुद्र की ओर ही
अभिमुखाः द्रवन्ति तथामी नरलोकवीराः	मुँह उठाए दौड़ती हैं, वैसे ही ये मनुष्यलोक के {ज्ञानयुद्धकर्ता} वीरपुरुष
तव अभिविज्वलन्ति वक्त्राणि विशन्ति	आप {ज्ञानसूर्य} के चारों ओर से धधकते हुए मुखों में {तेजी से} प्रवेश कर रहे हैं।

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः। तथैव नाशाय विशन्ति लोकाः तव अपि वक्त्राणि समृद्धवेगाः।। 11/29

यथा पतंगाः प्रदीप्तं ज्वलनं नाशाय समृद्धवेगाः	जैसे पतंगे {दहकती हुई} प्रज्वलित अग्नि में मरने के लिए झपटकर
विशन्ति तथा एव लोकाः अपि नाशाय	{खिंचे हुए} जा गिरते हैं, वैसे ही लोग भी {अपने देहभान का} विनाश के लिए

समृद्धवेगाः तव वक्त्राणि विशन्ति	झपटते हुए {सहमत हो} आपके {आग उगलते} मुखों में {प्रभावित हुए} चले जाते हैं।

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्तात् लोकान् समग्रान् वदनैः ज्वलद्भिः। तेजोभिः आपूर्य जगत् समग्रं भासः तव उग्राः प्रतपन्ति विष्णो।। 11/30

विष्णो ज्वलद्भिः वदनैः समग्रान् लोकान्	हे प्रवेशनीय {शिवबाबा! क्रोध में} जलते हुए मुखों से {आप} सब लोगों को
समंतात् ग्रसमानः लेलिह्यसे तवोग्राः	चारों ओर से निगलते {समाते} हुए चाट रहे हैं। आपकी {तीखी वाणी की} भयंकर
भासः समग्रं जगत्तेजोभिरापूर्य प्रतपन्ति	ज्वालाएँ सारे संसार को तेज से भरती हुई तीव्रता से जला रही हैं।

आख्याहि मे को भवान् उग्ररूपः नमः अस्तु ते देववर प्रसीद। विज्ञातुं इच्छामि भवन्तं आद्यं न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिं।। 11/31

देववर मे आख्याहि उग्ररूपः भवान्	हे देवश्रेष्ठ महादेव! मुझे बताइए {ऐसे महाकाल की तरह} भयंकर रूप वाले आप
कः ते नमः अस्तु प्रसीद भवन्तं	कौन हैं? आपको प्रणाम है। प्रसन्न हो जाइए। आपके {सनातनी व्यक्त+अव्यक्त}
आद्यं विज्ञातुं इच्छामि हि	आदिकालीन {ज्योतिर्लिंग रूप} को जानना चाहता हूँ; क्योंकि {हे रहस्यमय शिवबाबा!}
तव प्रवृत्तिं न प्रजानामि	आपके {आश्चर्यजनक, विस्मयभरे & बहुरूपी} क्रियाकलाप को {मैं} बिल्कुल नहीं जानता हूँ।

[32-34 भगवान द्वारा अपने प्रभाव का वर्णन और अर्जुन को युद्ध के लिए उत्साहित करना]

श्रीभगवानुवाचः- कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः। ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः ।। 11/32

लोकक्षयकृत् प्रवृद्धः कालः अस्मि	संसार का महाविनाशकर्ता {कल्पान्तकालीन} विकराल काल मैं हूँ {और सब धर्मों में से}
इह लोकान् समाहर्तुं प्रवृत्तः	यहाँ {शतवर्षीय पु. संगमयुगी शूटिंग में विष्णुलोकीय वैकुण्ठ के श्रेष्ठ} लोगों के संगठनार्थ लगा हूँ।
प्रत्यनीकेषु ये योधाः अवस्थिताः	विरोधी {धर्मों की} सेनाओं में जो योद्धा {बड़े ज्ञानी बने} खड़े हैं,
सर्वे त्वां ऋतेऽपि न भविष्यन्ति	{वे} सब तेरे {धर्मयुद्ध में} न होने पर भी नहीं बचेंगे; {अवश्य अनिश्चय की मौत मरेंगे।}

तस्मात् त्वं उत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून् भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धं। मया एव एते निहताः पूर्वं एव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।। 11/33

तस्मात् त्वं उत्तिष्ठ यशः लभस्व	इसलिए तू उठ खड़ा हो। कीर्ति प्राप्त कर। {अपने अंदर के देहभान से पैदा कामादिक}
शत्रून् जित्वा समृद्धं राज्यं भुङ्क्ष्व	शत्रुओं को जीतकर वैभव संपन्न {जगतजीत बन सारे संसार के} राज्य का भोगकर।
एते पूर्वं एव मया	ये {कामादि के साकार रूप दुर्योधन-दुःशासनादि} पूर्व {कल्प} में भी मेरे {मूर्तरूप} द्वारा
निहताः सव्यसाचिन्	{देहभान से} मारे गए थे; {अतः अब भी} हे वामांगी {शिखंडी रूपा जगदंबा द्वारा} शरसंधानक!
एव निमित्तमात्रं भव	{हिम्मत करके} केवल निमित्तमात्र बन जा। {कल्प•-2 की हूबहू विश्वविजय जैसे हुई पड़ी है।}

•{कल्प-2 लगि प्रभु-अवतारा। (तुलसी. कृत रामायण) कहते भी हैं-'हिस्ट्री रिपीट्स इट सैल्फ'।}

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथा अन्यान् अपि योधवीरान्। मया हतान् त्वं जहि मा व्यथिष्ठा युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्।। 11/34

द्रोणं च भीष्मं	{शास्त्रीय बुद्धिरूप कलश वाले} द्रोण और {काम-इन्द्रिय के युद्ध से दूरबाज़-खुशबाज़} संन्यासी भीष्म
च जयद्रथं	{जैसे स्वर्ग-सुखत्यागी} तथा {अरबियन यवनों के विशाल शरीर वाले देहांकार से दूसरे धर्मों के ऊपर विजयी} जयद्रथ
च कर्णं तथा मया	और {उत्तम सारथी अधिरथ बने ज्ञानसूर्य-पुत्र} कर्ण को, वैसे ही मेरे {पुत्र मूर्तिमान महादेव} द्वारा
हतान् अन्यान् अपि	{कल्पपूर्व-शूटिंग में 5000 वर्ष पूर्व} मारे गए दूसरे भी {द्वैतवादी द्वापुर से आए विदेशी-}
योधवीरान् त्वं जहि मा	{विधर्मी} वीर योद्धाओं {की वृद्धि} को तू नष्ट कर दे {नारकीय पाप के पक्षपातियों से} ना
व्यथिष्ठा युध्यस्व रणे	डरो। {धर्म-} युद्ध करो; {क्योंकि तुम्हीं सन्नद्ध महाभारी महाभारत के} धर्मयुद्ध में {देहभान से पैदा}
सपत्नान् जेतासि	{इन आतताई कामी-क्रोधी} शत्रुओं को {ज्ञान-योगबल और गुणराज सहनशक्ति से} जीतने वाले हो।

[35-46 भयभीत हुए अर्जुन द्वारा भगवान की स्तुति और चतुर्भुजरूप का दर्शन कराने के लिए प्रार्थना]

सञ्जय उवाचः- एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी । नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य ।। 11/35

केशवस्य एतत् वचनं श्रुत्वा	ब्रह्मा के स्वामी {शिवबाबा} की {अहिंसा परमधर्म की} इस बात को सुनकर

किरीटी वेपमानः कृतांजलिः	{विश्वनिर्माण-जिम्मेवारी के} ताजधारी अर्जुन ने काँपते हुए {बुद्धि रूपी} हाथ जोड़कर
नमस्कृत्वा भूय एव भीतभीतः	झुककर {और} फिर भी {महाभारत के सन्नद्ध खूनीनाहक खेल से} भयभीत हुआ
प्रणम्य सगद्गदं कृष्णमाह	पूरा {नम्रतापूर्वक} झुकते हुए रूँधी वाणी से आकर्षणमूर्त {शिवबाबा} से {ऐसे} कहा।

अर्जुन उवाचः- स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च । रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः ।। 11/36

हृषीकेश स्थाने तव प्रकीर्त्या	हे {मेरी चंचल, बेलगाम, अश्वरूप} इन्द्रियों के स्वामी! ठीक है कि आपके उत्तम कीर्तिगान/स्तुति से
जगत् प्रहृष्यति चानुरज्यते	जगत-समुदाय प्रसन्न होता है और {कीर्ति में} अनुरागी है। {यही कारण है कि}
भीतानि रक्षांसि दिशः द्रवन्ति च	डरे हुए {क्रोधादि रूप भयभीत हुए} राक्षस दिशाओं में भाग रहे हैं और {सफलताप्राप्त}
सिद्धसंघाः सर्वे नमस्यन्ति	{पुरुषार्थी} सिद्धों के समूह सब {ही आपको नम्रचित्त से झुककर हाथ जोड़} प्रणाम कर रहे हैं।

कस्मात् च ते न नमेरन् महात्मन् गरीयसे ब्रह्मणः अपि आदिकर्त्रे। अनन्त देवेश जगन्निवास त्वं अक्षरं सत् असत् तत्परं यत्।। 11/37

महात्मन् अनन्त देवेश जगन्निवास	हे महात्मा! अन्तहीन {गुणवाले} देवाधिदेव! हे जगदाधार! {त्रिमूर्ति शिव}
ब्रह्मणः अपि आदिकर्त्रे च गरीयसे ते	ब्रह्मा के भी आदि रचनाकार और सबके जगद्गुरू को वे {विदेशी-विधर्मी और}
कस्मात् न नमेरन् सत् असत्	{शक्तिशाली हिंसक/कुकर्मी} कैसे {बुद्धि से} नमन नहीं करेंगे? सत्य-असत्य
तत्परं यत् अक्षरं त्वं	{देव और दानव} उन दोनों से परे जो {आप एकमात्र सदा} अमोघवीर्य हैं, {वह} आप {शिवबाबा ही} हो।

त्वं आदिदेवः पुरुषः पुराणः त्वं अस्य विश्वस्य परं निधानं। वेत्ता असि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वं अनन्तरूप।। 11/38

त्वं आदिदेवः परं धाम पुराणः पुरुषः	आप आदिदेव हो। परे-ते-परे {परमब्रह्मा के} धाम वाले हो। पुरातन पुरुष हो।
त्वं अस्य विश्वस्य परं निधानं च वेत्ता	आप इस विश्व के परम आश्रय हो और {सब-कुछ} जानने वाले {त्रिकालदर्शी} हो
च वेद्यं असि अनन्तरूप	तथा {संगम में सदासर्वदा अखूट ज्ञान-भंडारी रूप में} जानने योग्य हो। हे अनंतगुण रूप {शिवबाबा ! }

त्वया विश्वं ततं	{वटबीज रूप से सृष्टिवृक्ष जैसे} आप {के निराकारी-निर्विकारी बने बीजरूप जगत्पिता} से विश्व फैला है।

वायुः यमः अग्निः वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिः त्वं प्रपितामहश्च। नमः नमः ते अस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयः अपि नमः नमः ते।। 11/39

वायुः यमः अग्निः वरुणः शशांकः	वायुदेव, यमदेव, अग्निदेव, वरुणदेव, चंद्रमा/{देवेन्द्र आदि सभी दिग्पालों के भी}
प्रजापतिः च	प्रजापति {जो कलियुगांत के पुरुषोत्तम संगमयुग में 7 अरब सर्वधर्मियों का एक ही जगत्पिता है} और
प्रपितामहः त्वं ते सहस्रकृत्वः	{उस जगत्पिता के भी} पितामह/डाडे {शिवसुप्रीम} आप हो; {अतः केवल} आपको सहस्रों बार
नमः-2 अस्तु च पुनः अपि ते नमः-2	नमस्कार! नमस्कार हो! और फिर भी {भूलचूक से भी} आपको बारम्बार नमन है।

नमः पुरस्तात् अथ पृष्ठतः तेः नमः अस्तु ते सर्वत एव सर्व। अनन्तवीर्य अमितविक्रमः त्वं सर्वं समाप्नोषि ततः असि सर्वः।। 11/40

ते पुरस्तात् अथ पृष्ठतः नमः	आपको {सच्चाई से} सन्मुख और पीछे से नमस्कार। {ये मात्र दिखावटी सम्मान नहीं है।}
सर्व सर्वत ते एव नमः अस्तु	हे प्राणीमात्र के सबकुछ! आपको ही {दसों दिशाओं में सब ओर से} नमस्कार हो।
अनन्तवीर्य त्वं अमितविक्रमः	हे अनंतवीर्य! आप अत्यंत पराक्रमी हो। {क्योंकि आप ही सर्वशक्तिमान महादेव की योग-}
सर्वं समाप्नोषि ततः सर्वः असि	{ऊर्जा से नं. वार} सबमें समाए हुए हो। इसलिए {प्राणीमात्र केलिए आप ही} सब-कुछ हो।

सखा इति मत्वा प्रसभं यत् उक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखे इति। अजानता महिमानं तव इदं मया प्रमादात् प्रणयेन वा अपि।। 11/41

हे सखे तव इदं महिमानं अजानता सखा	हे सखे! आपकी इस {अतुलनीय} महिमा को अज्ञानता से {आपको} सखा
इति मत्वा प्रमादात् वा प्रणयेन अपि मया	मानकर प्रमाद से अथवा प्रेम के कारण भी मेरे द्वारा {भूल चूक से भी}
हे कृष्ण हे यादव इति यत् प्रसभं उक्तं	हे आकषणमूर्त हे यदुवंशी बं महादेव! ऐसे जो {कुछ} अनादर से कहा हो,

यत् च अवहासार्थं असत्कृतः असि विहारशय्यासनभोजनेषु। एकः अथवा अपि अच्युत तत्समक्षं तत् क्षामये त्वां अहं अप्रमेयं।। 11/42

च विहारशय्यासनभोजनेषु एकः अथवा	और खेल में, बिस्तर में लेटे या बैठे हुए, भोजन में, अकेले में अथवा

तत्समक्षं अवहासार्थमपि यदसत्कृतः असि	दूसरे के सामने {असम्मानपूर्वक} हँसी-मजाक में भी जो अनादर किया हो,
तत् अच्युत अप्रमेयं त्वां अहं क्षामये	उसके लिए हे अमोघवीर्य! हे उपमाहीन! आपसे मैं {नाचीज़} क्षमा माँगता हूँ।

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्। न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव।। 11/43

त्वं अस्य चराचरस्य लोकस्य पिता असि	आप इस {साकार} जड़-चेतन जगत् के {महादेव द्वारा बीजरूप} पिता हो
च पूज्यः गरीयान् गुरुः	और {उसी अविनाशी देह से जगत् के} पूजनीय सर्वोत्तम {साकार में एकमात्र सद्} गुरू {भी} हो।
अप्रतिमप्रभाव लोकत्रये त्वत्समः अपि	हे अनुपम प्रभाव वाले! तीनों लोकों में आप समान भी {ऐसी कोई आत्मा}
न अस्ति अन्यः अभ्यधिकः कुतः	{त्रिकालज्ञ} नहीं है, तो दूसरा {आपसे} बढ़कर {शक्तिशाली} कहाँ से {होगा}?

तस्मात् प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वां अहं ईशं ईड्यं। पिता इव पुत्रस्य सखा इव सख्युः प्रियः प्रियायाः अर्हसि देव सोढुं।। 11/44

तस्मात् कायं प्रणिधाय प्रणम्य ईड्यं	अतः शरीर को भली-भाँति {सच्चाई पूर्वक} अर्पण कर, खूब नम्र होकर, गायन योग्य,
त्वां ईशं अहं प्रसादये देव इव	{बहुधा प्रशंसनीय} आप ईश्वर को मैं प्रसन्न करता हूँ हे देव! जैसे {अजीज सम्बन्धियों में}
पिता पुत्रस्य सखा सख्युः प्रियः प्रियायाः	पिता पुत्र के, मित्र मित्र के {और} पति पत्नी के {या कोई भी प्रिय सम्बन्धी के}
इव सोढुं अर्हसि	{अपराध सहन करता है, क्षमा करता है}, वैसे ही {मेरे अपराध} सहन करने, {क्षमा करने में आप} समर्थ हो।

अदृष्टपूर्वं हृषितः अस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे। तत् एव मे दर्शय देव रूपं प्रसीद देवेश जगन्निवास।। 11/45

अदृष्टपूर्वं दृष्ट्वा हृषितोऽस्मि च	पहले कभी न देखे {रूप} को {बुद्धि रूपी त्रिनेत्र से} देखकर हर्षित हुआ हूँ, फिर भी
भयेन मे मनः प्रव्यथितं देव	{भयंकर रूप देख} भय से मेरा मन अत्यन्त व्याकुल हुआ है; {अतः} हे ज्ञान-दाता!
तदेव रूपं मे दर्शय	वही {पहले वाला वैकुण्ठ वासी विष्णु का सौम्य-सुखद} रूप मुझे {बुद्धिगत् तीसरे नेत्र से} दिखाइए।
देवेश जगन्निवास प्रसीद	हे देवों के देव {शिवबाबा}! जगत के {सदा अखूट} आश्रय ! {अभी मैंने जान लिया} प्रसन्न हो जाइए।

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तं इच्छामि त्वां द्रष्टुं अहं तथैव। तेन एव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्त्रबाहो भव विश्वमूर्ते।। 11/46

किरीटिनं गदिनं	{सम्पन्न होने वाले विश्व-नवनिर्माण की ज़िम्मेवारी के} ताजधारी, {संकल्प में दृढ़ता रूपी} गदाधारी,
चक्रहस्तं त्वां तथैव द्रष्टुं	{महादेव द्वारा बुद्धि रूपी} हाथ में {84 जन्मों के} चक्रधारी, आपको उसी रूप में देखने का
अहं इच्छामि विश्वमूर्ते सहस्त्रबाहो	मैं इच्छुक हूँ। हे विराट्- विश्वमूर्ति! हे {चतुर्मुखी ब्रह्मा की} हज़ार सहयोगी भुजाओं वाले
चतुर्भुजेन तेन एव रूपेण भव	चतुर्भुज रूप से उसी {साकारी सुमधुर विष्णु} रूप में {पूर्व जैसे फिर से} हो जाइए।

[47-50 भगवान द्वारा अपने विश्वरूप के दर्शन की महिमा का कथन तथा चतुर्भुज और सौम्यरूप का दिखाया जाना]

श्रीभगवानुवाच:- मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् | तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् || 11/47

अर्जुन परं तेजोमयं आद्यं अनन्तं	हे अर्जुन! परं तेजोमय {पुरुषोत्तम संगमयुग का} आदिकालीन अनन्त गुण वाला
इदं विश्वं रूपं मया आत्मयोगात्	यह विराट रूप मैंने {तेरे जैसी संतान के लिए कल्प-2 में संचित} अपनी योगूर्जा से
प्रसन्नेन तव दर्शितं यत्	{कार्यसिद्धि में} प्रसन्नतापूर्वक तेरे को {तीसरे बुद्धि-नेत्र से} दिखाया, जो {दुनियाँ में कभी भी}
मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वं	मेरा {यह इस प्रकार विराट रूप} तेरे {वर्तमान तामसी पतितरूप के} सिवा पहले नहीं देखा गया था।

न वेदयज्ञाध्ययनैः न दानैः न च क्रियाभिः न तपोभिः उग्रैः। एवंरूपः शक्यः अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर।। 11/48

कुरुप्रवीर एवंरूपः अहं न	हे {कर्मेन्द्रिय घमंडी} कुरुकुल के {भी हीरो} वीरप्रवर! ऐसे {बुद्धिगम्य अद्भुत} रूप वाला मैं न
वेदयज्ञाध्ययनैः न दानैः न क्रियाभिः	वेद {वाणी}, यज्ञ {और} स्वाध्याय से, न दान से, न {कर्मकाण्डीय} क्रियाओं से
च न उग्रैः तपोभिः त्वदन्येन	और न कठोर {दैहिक यंत्रणादाई} तपस्याओं से तेरे अतिरिक्त कोई दूसरा {5 अरब के}
नृलोके द्रष्टुं शक्यः	मनुष्यलोक में {ज्ञानगम्य बुद्धि से} देखने को समर्थ है। {इसमें अंधश्रद्धा की तो बात ही नहीं।}

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरं ईदृक् मम इदं। व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनः त्वं तत् एव मे रूपं इदं प्रपश्य।। 11/49

मम ईदृक् इदं घोरं रूपं दृष्ट्वा ते मा व्यथा	मेरा ऐसा यह {प्रलयंकारी} भयंकर रूप देखकर तू {मेरा सखा है}, मत घबरा
च मा विमूढभावः व्यपेतभीः	और न {बुद्धू जैसा} किंकर्तव्यविमूढ़ हो। {देहभान-निर्मित} भय त्याग {आत्मस्थ हुआ}
प्रीतमनाः त्वं पुनः मे तत् एव इदं रूपं प्रपश्य	प्रसन्न मन वाला तू फिर से मेरे उस ही इस {सौम्य} रूप को देख।

सञ्जय उवाच:- इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः | आश्वासयामास च भीतमेनं भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा || 11/50

इति वासुदेवः अर्जुनं तथा	ऐसे {अखूट ज्ञान धनदाता वसुदेव शिव के पुत्र} वासुदेव ने {धनंजय} अर्जुन को {प्यार से} ऐसे
उक्त्वा भूयः स्वकं रूपं दर्शयामास	कहकर पुनः अपना {शंकर-पार्वती+ब्रह्मा-सरस्वती = चतुर्भुजी विष्णु} रूप दिखाया
च पुनः सौम्यवपुः भूत्वा महात्मा	और फिर शांतरूप होकर महान् आत्मा {परमपिता सदाशिव+महादेव ने}
भीतं एनं आश्वासयामास	{देहभान से} भयभीत इस {अर्जुन} को {पहले की तरह उत्साहित करते हुए} आश्वस्त किया।

[51-55 बिना अनन्यभक्ति के चतुर्भुजरूप के दर्शन की दुर्लभता का और फलसहित अनन्यभक्ति का कथन]

अर्जुन उवाच:-दृष्ट्वा इदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन। इदानीं अस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः।। 11/51

जनार्दन तवेदं सौम्यं मानुषं	हे मानव-आर्तनाद-श्रोता {शिवबाबा}! आपका यह {सम्पूर्ण चंद्रमा-जैसा} शांत मानवीय
रूपं दृष्ट्वा इदानीं सचेताः	स्वरूप देखकर अब सचेत हुआ हूँ; {नहीं तो निश्चय ही किंकर्तव्यविमूढ़ हो रहा था, अब}
संवृत्तः अस्मि प्रकृतिं गतः	पूरी तरह स्थिर हो गया हूँ। अपनी स्वाभाविक {आत्मिक} स्थिति में आ गया हूँ।

श्रीभगवानुवाच:-सुदुर्दर्शं इदं रूपं दृष्टवान् असि यत् मम। देवा अपि अस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः।। 11/52

मम यद्रूपं दृष्टवानसि इदं सुदुर्दर्शं	मेरे जिस रूप को {ज्ञाननेत्र से} देखा है, इसे देखना बहुत कठिन है।

देवापि नित्यमस्य रूपस्य दर्शनकांक्षिणः	{पूजनीय} देवात्माएँ भी सदैव इस रूप के दर्शनाभिलाषी रहते हैं।

न अहं वेदैः न तपसा न दानेन न च इज्यया। शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवान् असि मां यथा।। 11/53

एवंविधः मां यथा दृष्टवानसि	इस भाँति मुझको जिस रूप में {तूने त्रिनेत्र से} देखा है, {उस रूप में कभी भी}
अहं न वेदैर्न तपसा न दानेन	मुझे न {नर-निर्मित त्रिगुणात्मक} वेदों द्वारा, न {दैहिक} तप द्वारा, •न दान द्वारा
च न इज्यया द्रष्टुं शक्यः	और न {मन की एकाग्रता बिना मात्र स्वाहा-2 वाले} यज्ञ द्वारा {ही} देखा जा सकता है;

{•यज्ञ-तप-दानादि करने से मैं नहीं मिलता हूँ। (मु.ता.8.2.68 पृ.3 मध्यादि)} {शास्त्र लिखने-पढ़ने से भी नहीं मिलता।}

भक्त्या तु अनन्यया शक्य अहं एवंविधः अर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप।। 11/54

तु परंतप अर्जुन अनन्यया	किंतु हे {कामादिक} शत्रुतापक अर्जुन! {'मामेकम्' की} अव्यभिचारी {स्मृति से भरपूर}
भक्त्या अहं एवंविधः ज्ञातुं	भक्ति से मैं {एडवांस सच्चीगीता द्वारा} ऐसा विधानरूप जानने-पहचानने, {और ऐसे ही}
तत्त्वेन द्रष्टुश्च प्रवेष्टुश्च शक्यः	{मुकर्रर रथ में भली-भाँति} तत्त्वपूर्वक देखने और {उसमें} प्रवेश करने में भी समर्थ हूँ।

मत्कर्मकृत् मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः। निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मां एति पाण्डव।। 11/55

पाण्डव यः मत्कर्मकृत्	हे {पाण्डुनामक परमतीर्थनेता} पण्डा शिव-पुत्र अर्जुन! जो मेरे {यज्ञसेवार्थ} कर्म करता है,
मत्परमः संगवर्जितः मद्भक्तः	मुझे {वैयक्तिक रूप से} परमगति मानता है, अन्य संगरहित हुआ मुझे भजता है,
स सर्वभूतेषु निर्वैरः मां एति	वह सब {श्रेष्ठ या निष्कृष्ट} प्राणियों में वैरहीन हुआ मुझ शिवबाबा को पाता है।